Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 18th Jan. 2019, Revised on 25th Jan. 2019; Accepted 30th Jan. 2019

आलेख

स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की आधुनिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

* डा. पवन कुमार,
सह. प्राध्यापक शिक्षाशास्त्र, गुरू नानक कालेज ऑफ एजुकेशन, डल्लेवाल, होशियारपुर
pawankumar197115@gmail.com , 99144-14333, 94171-50563

मुख्य शब्द – *आध्यात्मिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा आदि।*

"मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति करना ही शिक्षा है।"

स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मानव का निर्माण करना है। वे वेदान्त दर्शन के माध्यम से मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना चाहते थे। स्वामी विवेकानन्द ने व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा को सबसे अचूक हथियार बताया है। उन्होंने किताबी ज्ञान के साथ–साथ आत्मिक विकास को अनिवार्य माना है। उन्होंने आध्यात्मिक शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा को महत्व दिया है।

स्त्री शिक्षा की अनिवार्यता पर बल देते हुए उन्होने स्वीकार किया है कि "जो देश व राष्ट्र स्त्रियों का आदर नहीं करते वे कभी बड़े नहीं हो पाए हैं, और न भविष्य में कभी होंगे।"

वे भारतीय धर्म दर्शन की व्यवस्था आधुनिक परिप्रेक्ष्य में करने, वेदांत को व्यवहारिक रूप देने एवं उसका प्रचार करने और समाज सेवा एवं समाज सुधार करने के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं परन्तु इन्होने शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया और नवभारत के निर्माण के लिए तत्कालीन शिक्षा में सुधार हेतु अनेक सुझाव दिये। प्रस्तुत आलेख में स्वामी विवेकानंद के शिक्षा संबंधी विचारों की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिता का विवेचन किया गया है।

स्वामी विवेकानन्द का जीवन इतिहास –

स्वामी विवेकानन्द (जन्म 12 जनवरी, 1863–मृत्यु: 4 जुलाई, 1902) वेदान्त के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। उन्होंने अमेरिका स्थित शिकांगो में सन् 1893 में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का आध्यात्मिकता से परिपूर्ण वेदान्त दर्शन अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानन्द की वक्तृता के कारण ही पहुँचा। उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी जो आज भी अपना काम कर रहा है। वे रामकृष्ण परमहंस के सुयोग्य शिष्य थे। उन्हें प्रमुख रूप से उनके भाषण की शुरुआत "मेरे अमेरीकी भाइयों एवं बहनों" के साथ करने के लिये जाना जाता है। उनके संबोधन के इस प्रथम वाक्य ने सबका दिल जीत लिया था।

जीवनवृत्त–

स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी, 1863 (विद्वानों के अनुसार मकर संक्रान्ति संवत् 1920) कोलकाता में एक बंगाली कायस्थ परिवार में हुआ था। उनके बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। पिता विश्वनाथ दत्त कलकत्ता हाईकोर्ट में एक प्रसिद्ध वकील थे। विश्वनाथ दत्त पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास रखते थे। वे अपने पुत्र नरेन्द्र को भी अंग्रेजी

पढ़ाकर पाश्चात्य सभ्यता के ढर्रे पर चलाना चाहते थे। परन्तु उनकी माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों की महिला थीं। उनका अधिकांश समय भगवान शिव की पूजा–अर्चना में व्यतीत होता था। नरेन्द्र की बुद्धि बचपन से ही बड़ी तीव्र थी और परमात्मा को पाने की लालसा भी प्रबल थी। इस हेतु वे पहले ब्रहम समाज में गये परन्तु वहाँ उनके चित्त को सन्तोष नहीं हुआ। वे वेदान्त और योग को पश्चिम संस्कृति में प्रचलित करने के लिये महत्वपूर्ण योगदान देना चाहते थे। स्वामी विवेकानन्द अपना जीवन अपने गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस को समर्पित कर चुके थे। उनके गुरुदेव का शरीर अत्यन्त रुग्ण हो गया था। गुरुदेव के शरीर–त्याग के दिनों में अपने घर और कुटुम्ब की नाजुक हालत व स्वयं के भोजन की चिन्ता किये बिना वे गुरु की सेवा में सतत् संलग्न रहे।

विवेकानन्द बड़े स्वप्नदृष्टा थे। उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें धर्म या जाति के आधार पर मनुष्य–मनुष्य में कोई भेद न रहे। उन्होंने वेदान्त के सिद्धान्तों को इसी रुप में रखा। अध्यात्मवाद बनाम भौतिकवाद के विवाद में पड़े बिना भी यह कहा जा सकता कि समता के सिद्धान्त का जो आधार विवेकानन्द ने दिया उससे सबल बौद्धिक आधार शायद ही ढूँढा जा सके। विवेकानन्द को युवकों से बड़ी आशाएँ थीं। आज के युवकों के लिये इस ओजस्वी सन्यासी का जीवन एक आदर्श है।

बचपन

बचपन से ही नरेन्द्र अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि के तो थे ही नटखट भी थे। अपने साथी बच्चों के साथ वे खूब शरारत करते और मोका मिलने पर अपने अध्यापकों के साथ भी शरारत करने से नहीं चूकते थे। उनके घर में नियमपूर्वक रोज पूजा–पाठ होता था धार्मिक प्रवृत्ति की होने के कारण माता भुवनेश्वरी देवी को पुराण, रामायण, महाभारत आदि की कथा सुनने का बहुत शौक था। कथावाचक बराबर इनके घर आते रहते थे। नियमित रुप से भजन–कीर्तन भी होता रहता था। परिवार के धार्मिक एवं आध्यात्मिक वातावरण के प्रभाव से बालक नरेन्द्र के मन में बचपन से ही धर्म एवं अध्यात्म के संस्कार गहरे होते गये। माता–पिता के संस्कारों और धार्मिक वातावरण के कारण बालक के मन में बचपन से ही ईश्वर को जानने और उसे प्राप्त करने की लालसा दिखायी देने लगी थी। ईश्वर सत्ता को जानने की उनमें ललक थी। एक दिन कवि वर्ड सवर्थ पर क्लास लेते हुए नरेन्द्र के कॉलेज के शिक्षकों ने दक्षिणेश्वर के रामकृष्ण परमहंस की सिद्धि एवं अलौकिक विष्य में विचार विमार्श किया । उन्होंने जल्दी की रामकृष्ण परमहंस के दर्शन किये । यहाँ उन्होंने अपना पुराना प्रश्न दोहराया, ''क्या आपने ईश्वर को देखा है? परमहंस ने कहा, ''हाँ मैने उसे देखा है'' फिर नरेन्द्र का प्रश्न था, ''क्या आप मुझे ईश्वर के दर्शन करा सकते हैं?'' परमहंस ने मुस्कुराकर कहा, ''हाँ बेटे, मैं तुम्हें अवश्य दर्शन कराऊँगा''।

इसके बाद नरेन्द्र ने स्वयं को आध्यात्मिक साधनों में लगा दिया। नरेन्द्र की भक्ति और तपस्या उच्च दर्जे की थी, इससे प्रभावित होकर रामकृष्ण ने उसे अपना प्रमुख शिष्य बना लिया। वस्तुतः परमहंस ने अपने संदेश प्रचार के लिए नरेन्द्र को ही माध्यम चुना। सन् 1886 के अगस्त में श्री रामकृष्ण परमहंस का परलोकवास हो गया । नरेन्द्र ने सन्यास धर्म अपनाकर स्वामी के नाम से प्रसिद्धि पाई ।

30 वर्ष की अवस्था में विवेकानंद 11 सितंबर सन् 1893ई0 में विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने वे अमेरिका गये और वहाँ जाने के पूर्व उन्होंने अपना नाम विवेकानन्द रखा। उन्होंने अशिक्षा को अपने देश की गरीबी, दरिद्रता एवं दुख का कारण बताया और भारत के नागरिकों की शिक्षा कैसी हो इस पर विचार व्यक्त किया । विदेशों में घूम–घूमकर हिन्दू धर्म का प्रचार कर देश एवं स्वयं का नाम कमाया । 4 जुलाई सन् 1902 में यह महात्मा संसार में हिन्दु धर्म को फिर से प्रतिष्ठित करके अल्पायु में ही परलोक सिधार गये।

1 मई सन् 1897 मे कोलकाता के पास स्थित बैलूर में स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरू की स्मृति में रामकृष्णा मिशन की स्थापना की तथा शिक्षा, चिकित्सा आदि विभिन्न क्षेत्रो में सेवा हेतु देश ओर विदेश में उनकी शाखाओं – प्रशाखाओं को प्रारम्भ कर संगठित रूप से इस कार्य को अंजाम देने की व्यवस्था भी की ।

स्वामी विवेकानन्द के कार्य

स्वामी जी ने भ्रमण कर धार्मिक शिक्षा अध्यात्मिक शिक्षा समाज सुधार आदि अनेक कार्य किये। यहाँ पर उनके कार्यों को निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत वर्णन किया गया है।

संस्थायें

अ– रामकृष्ण मिशन

ब– मायावती अद्वैत आश्रम

अ– रामकृष्ण मिशन

सन् 1897 ई., 1मई को रामकृष्णन मिशन की स्थापना की। रामकृष्ण मिशन के सिद्धान्तों का आधार वेदान्त दर्शन है। मिशन के अनुसार ईश्वर निराकार मानव बुद्धि से परे और सर्वव्यापी है। आत्मा ईश्वर का अंश है। सभी धर्म मौलिक रुप से एक है। पर वे अपने विभिन्न रुपों में ईश्वर तक पहुँचने के अलग–अलग रास्ते मात्र है। ईश्वर साकार और निराकार दोनों ही उसकी अनुभूति विभिन्न प्रतीकों के रुप में भी की जा सकती है।

मिशन मानव (विशेषकर गरीब, अपंग, कमजोर) की सेवा को ईश्वर की सेवा मानता है क्योंकि मनुष्य की आत्मा में परमात्मा का अंश है। इसी संदर्भ में शिक्षित भारतीयों से कहा–''जब तक करोड़ों लोग भूख और अज्ञान से पीड़ित है। तब तक मै उस हर व्यक्ति को देशद्रोही समझूँगा जो उनके खर्च से शिक्षित होकर भी उनके प्रति ध्यान नहीं देता है।''

ब–मायावती अद्वैत आश्रम

स्वामी जी ने हिमालय में ऐसा गढ़ स्थापित करने की योजना बनायी जहां पर पूर्व और पश्चिम के लोग मिल–जुल कर वेदान्त दर्शन का अभ्यास कर सके। 19 मार्च 1899 को अल्मोड़ा से 50 मील दूर मायावती नाम के अद्वैत आश्रम की स्थापना की। अल्मोड़ा में स्थापित अद्वैत आश्रम से रामकृष्ण संघ का प्रमुख पत्र 'प्रबुद्ध' निकालना आरम्भ हुआ जो मद्रास से निकलता था।

स्वामी जी ने देश की अनेक भागों में जनसेवा की अनेक संस्थाओं की स्थापना की। पश्चिमी देशों की यात्रा के दौरान उन्होंने फ्रांसिको, ऑकलैण्ड, अल्मोडा इत्यादि स्थानों पर भी केन्द्रों की स्थापना की।

प्रकाशित कार्य

स्वामी जी का विपुल साहित्य उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर दस खण्डों में (सन् 1963 को) प्रकाशित हुआ। ये निम्नलिखित हैं:–

1. ज्ञान योग
2. राज योग
3. प्रेम योग
4. कर्म योग
5. भक्ति योग
6. ज्ञान योग पर प्रवचन
7. सरल राजयोग
8. धर्मतत्व
9. धर्म विज्ञापन
10. धर्म रहस्य
11. हिन्दू धर्म
12. हिन्दू धर्म के पक्ष में
13. शिकांगो वार्ता
14. मरवोत्तर जीवन
15. भगवान श्री कृष्ण और भगवत गीता
16. देववाणी
17. कवितावली
18. वेदान्त
19. व्यवहारिक जीवन में वेदान्त
20. आत्म तत्व

21. आत्म तत्व
22. विवेकानन्द जी के संग में
23. स्वामी विवेकानन्द जी की वार्तालाप
24. विवेकानन्द जी के सानिध्य में
25. पदावली
26. भारत में विवेकानन्द
27. विवेकानन्द संचयन

विवेकानन्द का योगदान तथा महत्व

उन्तालीस वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामी विवेकानन्द जो काम कर गये वे आने वाली अनेक शताब्दियों तक पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

तीस वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो, अमेरिका के विश्व धर्म सम्मेलन में हिन्दू धर्म का प्रतिनिधित्व किया और उसे सार्वभौमिक पहचान दिलवायी। गुरुदेव रविन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था–''यदि आप भारत को जानना चाहते हैं तो विवेकानन्द को पढ़िये। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पायेंगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।''

रोमा रोला ने उनके बारे में कहा था, ''उनके द्वितीय होने की कल्पना करना भी असम्भव है वे जहां भी गये, सर्वप्रथम ही रहे। हर कोई उनमें अपने नेता का दिग्दर्शन करता था। वे ईश्वर के प्रतिनिधि थे और सब पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेना ही उनकी विशिष्टता थी। हिमालय प्रदेश में एक बार एक अनजान यात्री उन्हें देख ठिठक कर रुक गया और आश्चर्यपूर्वक चिल्ला उठा–''शिव'' यह ऐसा हुआ मानो उस व्यक्ति के आराध्य देव ने अपना नाम उनके माथे पर लिख दिया हो।''

वे केवल सन्त ही नहीं, एक महान देशभक्त, वक्ता, विचारक, लेखक और मानव–प्रेमी भी थे। अमेरिका से लौटकर उन्होंने देशवासियों का आह्वान करते हुए कहा था–'नया भारत निकल पडे मोची की दुकान से, भड़भूजे के भाड़ से, कारखाने से, हाट से, बाजार से, निकल पड़े झाडियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से।'' और जनता ने स्वामीजी की पुकार का उत्तर दिया। वह गर्व के साथ निकल पडी। गांधीजी को आजादी की लड़ाई में जो जन समर्थन मिला, वह विवेकानन्द के आह्वान का ही फल था। इस प्रकार वे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के भी एक प्रमुख प्रेरणा–स्रोत बने। उनका विश्वास था कि पवित्र भारतवर्ष धर्म एवं दर्शन की पुण्यभूमि है। यहीं बड़े–बड़े महात्माओं व ऋषियों का जन्म हुआ, यही संन्यास एवं त्याग की भूमि है तथा यहीं–केवल यहीं–आदिकाल से लेकर आज तक मनुष्य के लिये जीवन के सर्वोच्च आदर्श एवं मुक्ति का द्वार खुला हुआ है। उनके कथन ''उठो, जागो, स्वयं जागकर औरों को जगाओ। अपने नर–जन्म को सफल करो और तब तक नहीं रूको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाये।''

उन्नीसवीं सदी के आखिरी वर्षों में विवेकानन्द लगभग सशस्त्र या हिंसक क्रान्ति के जरिये भी देश को आजाद करना चाहते थे। परन्तु उन्हें जल्द ही यह विश्वास हो गया था कि परिस्थितियाँ उन इरादों के लिये अभी परिपक्व नहीं है।

स्वामी विवेकानन्द के दार्शनिक विचार

स्वामी विवेकानन्द के दार्शनिक विचार भारतीय दर्शन वेदान्त शाखा से प्रेरित हैं। उनके अनुसार आत्माशाष्वत और सर्वव्यापी है। सम्पूर्ण विश्व में एक चेतन सत्ता व्याप्त है। विश्व में केवल एक आत्मत्व है। हमेशा उसकी अभिव्यक्ति हैं। मनुष्य की आत्मा न कभी मरती है न कभी जन्म लेती है। शरीर नश्वर है। आत्मा अमर है। ज्ञान, भक्ति योग और कर्म ये चार मार्ग मुक्ति की ओर ले जाते हैं। अपनी योग्यता के अनुसार हर व्यक्ति को ज्ञान के मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। आज के युग में कर्म का विशेष महत्व है। विवेकानन्द जी का कहना था–

वीर बनो, हमेशा कहो, 'मैं निर्भय हूँ, सबसे कहो डरो–मत, भय मृत्यु है, भय पाप है, भय नरक है। भय का जीवन में कोई स्थान नहीं है।''

स्वामी विवेकानन्द अन्य दर्शनों के प्रति उदार दृष्टिकोण रखते थे। लेकिन अद्वैत दर्शन को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। उनके विचारों का निम्नक्रम में अध्ययन करेंगे।

धार्मिक दर्शन

विवेकानन्द धार्मिक दर्शन को शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मानते थे। वे चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति उस सत्य धर्म को ज्ञात कर सके। जो उसके अन्दर विद्मान है। इसके लिये इन्होंने मन और हृदय की पवित्रता को आवश्यक माना है। इसके लिए उन्होंने बताया कि बालक का मन पवित्र होता है। उसका विकास करना होता है। उसमें आज्ञा पालन समाज सेवा, महापुरूषों एवं सन्तों के अनुकरणीय आदर्श को अपनाने की क्षमता का विकास करना चाहिए।

ब्रह्म और ईश्वर

वेदान्त के अनुसार ब्रह्म ही सब कुछ है। वही इस सृष्टि का निर्मित एवं उपादान कारण है। वेदान्त को एक उदाहरण द्वारा समझाते हैं कि जिस प्रकार एक मकड़ी अपने जाल का निर्माण स्वयं करती हैं। अपने अन्दर से जाला बनाने का पदार्थ निकालती है एवं उसे इच्छानुसार अपने अन्दर समेट लेती है। उसी प्रकार इस ब्रह्मण्ड का निर्माण हुआ है। उसका उपादान कारण भी वही है।

ब्रह्म निराकार, निर्गुण, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक एवं सर्वशक्तिमान है। माया के संयोग से वह साकार रूप धारण करता है। यह समस्त स्थूल उसी का साकार रूप है। ब्रह्म भी सृष्टि के रूप में अभिव्यक्ति हो रहा है। इस प्रकार विवेकानन्द जी ब्रह्म के सगुण रूप को ईश्वर कहते हैं। उनके अनुसार सगुण और निर्गुण दोनों ही एक ही तत्व के दो रूप हैं। उनका कहना है कि जिसे तुम सगुण ईश्वर कहते हो वह निर्गुण ब्रह्म ही है।

ईश्वर और आत्मा

स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं कि संसार के सभी स्थूल पदार्थ एवं सूक्ष्म आत्मायें परमात्मा (वृद्ध) के अंश हैं। वे अद्वैतवाद के सिद्वान्त से सहमत हैं कि सभी आत्मायें परमात्मा का अंश मात्र है। उसी की भांति वे सभी अनादि और अनन्त हैं। विश्व के सभी अन्य पदार्थ भी ब्रह्म परमात्मा के ही अंश हैं। उन पदार्थों में आत्मा की भांति परमात्मा को समझने और परमात्मा को प्राप्त करने की सामर्थ्य नहीं है। आत्मा एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करती रहती है। जब तक वह वास्तविक रूप को नहीं समझ लेती और उसे प्राप्त नहीं कर लेती। आत्मा परमात्मा को प्राप्त कर मुक्त हो जाती है, ईश्वर की आत्मा का सम्बन्ध सभी धर्मों की विवेचना का विषय रहा है। वेदान्त में इसे अत्यन्त घनिष्ठ माना है।

आत्मानम् विधि

विवेकानन्द जी अपने व्याख्यानों में सब कहीं बातों और विचारों को तर्क से पुष्टि करने का प्रयास करते थे। उन्होंने कहा था–मेरा आशय वही है। जो आज का हर शिक्षक मनुष्य चाहता है अर्थात् लौकिक ज्ञान के आविष्कार को धर्म के क्षेत्र में प्रयुक्त करना सबसे महान उपदेश भी यही था कि मानव अपने वास्तविक रूप को समझें।

विवेकानन्द जी के अनुसार प्रमाणिक ग्रन्थों को स्वयं पढ़ना और इसे समझने का प्रयत्न करना ही आत्मानम् विधि है। इस विधि में चिन्तन, मनन एवं निदिध्यासन (आचरण से लाना) अनिवार्य है। क्योंकि यही उसकी सत्यता की कसौटी है।

आत्मा और प्रकृति

आदि शंकराचार्य के समान स्वामी विवेकानन्द भी जीवन का अन्तिम लक्ष्य मुक्ति प्राप्त करना मानते हैं। अर्थात् इस प्रपंचात्मक जगत तथा आवागमन के चक्र से छुटकारा पाना और आत्मा को परमात्मा में लीन करना है। आत्मा का निर्माण भौतिक तत्वों से नहीं हुआ। वह एक अविभाज्य ईकाई है। इसलिये अन्त होना भी अनिवार्य है।

विवेकानन्द अनुसार आत्मा इस संसार में इसलिये आती है ताकि जगत का विकास हो सके, किन्तु जगत में आत्मा का विकास न होकर प्रकृति का विकास होता है। यह आत्मा मनुष्य में वृद्धि के माध्यम से मन और इन्द्रियों के द्वारा जगत का अनुभव करती है। वे सब आत्मा के साधन हैं। आत्मा इन सब पर शासन करती है। विवेकानन्द जी के शब्दों में–आत्मा इन सभी मंत्रों का शासन है। घर का स्वामी है तथा शरीर का सिहांसनरूप राजा है। अहंकार, बुद्धि और चिन्तन की शक्तियाँ, इन्द्रियाँ, शरीर और ये सब उसकी आज्ञा का पालन करते हैं। इन सबको प्रकाशित करने वाली आत्मा ही है।

जगत

आदिशंकराचार्य ने वस्तु जगत के ज्ञान को (असत्य परिवर्तनशील),नाशवान बताया, किन्तु सूक्ष्म जगत का ज्ञान सत्य (चिरन्तन एवं शाश्वत) है। विवेकानन्द जी वस्तु जगत एवं सूक्ष्म जगत दोनों को सत्य मानते हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि वस्तु जगत भी ब्रह्म द्वारा ही निर्मित है और ब्रह्म सत्य है। अतः उसका जगत भी सत्य होना चाहिए। सत्य से असत्य की उत्पत्ति नहीं हो सकती। ज्ञान प्राप्ति के साधनों के सम्बन्ध में उनका मानना है कि वस्तु जगत का ज्ञान प्रत्यक्ष एवं प्रयोग विधि से होता है। सूक्ष्म जगत के ज्ञान की प्राप्ति के लिये सत्संग, स्वाध्याय एवं भोगाभ्यास की आवश्यकता है। उनकी दृष्टि में योग ज्ञान ही ज्ञान प्राप्त करने की सर्वोत्तम विधि है। जिसमें दोनों के ज्ञान प्राप्त किये जा सकते हैं। मनुष्य का लक्ष्य इस संसार को ज्यो का त्यों समझते हुये एवं कार्य करते हुये ऊपर उठना है।

स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचार

स्वामी विवेकानन्द ने पुस्तकीय शिक्षा का विरोध किया। अनेक नगरों का भ्रमण करते हुये उन्हें शिक्षा की भौतिक उपलब्धियाँ भी दिखाई दी। भारतीयों की निर्धनता का एक कारण उन्होंने अशिक्षा को माना है।

शिक्षा की अवधारणा

स्वामी जी भारत में ऐसी शिक्षा चाहते थे। जिससे व्यक्ति चरित्रवान और आत्म निर्भर बन सकें। स्वामी जी शिक्षा के द्वारा मनुष्य को लौकिक एवं पार–लौकिक दोनों जीवन के लिये तैयार कराना चाहते थे। उनका विश्वास था कि जब तक हम भौतिक दृष्टि से सम्पन्न एवं सुखी नहीं होते तब तक ज्ञान, कर्म, भक्ति, योग में, सब कल्पना की वस्तु हैं। लौकिक दृष्टि से उन्होंने नारा दिया– हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिसके द्वारा चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो, और मनुष्य स्वावलम्बी बनें। परन्तु मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य अपने अन्दर छिपी आत्मा की अभिव्यक्ति है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा केवल सूचनायें प्राप्त करने की ही नहीं। अध्यापक बालक के मस्तिष्क में केवल रटी–रटाई सूचनायें बलपूर्वक ठूसता है, उसे शिक्षा मानना शिक्षा का अनर्थ मात्र है। स्वामी जी ने लिखा है कि ''शिक्षा का अर्थ मात्र सूचनाओं से होता है तो पुस्तकालय विश्व की सबसे बड़ी एवं सर्वश्रेष्ठ सन्त तथा विश्वकोष ऋषि बन जाते हैं''

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''शिक्षा उस सन्निहित पूर्णता का प्रकाश है, जो मनुष्य में पहले से ही विद्यमान है।''

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार

''शिक्षा मनुष्य में पहले से विद्यमान दैवी पूर्णता प्रत्यक्षीकरण है''।

शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षण के उद्देश्यों की चर्चा स्वामी विवेकानन्द ने बहुत व्यापक रूप में की है। उन्होंने वेदान्त को अपने जीवन का आधार बनाया था और वेदान्त का विचार था कि माया या अविद्या के कारण मनुष्य अपने प्रकृति स्वरूप को नहीं पहचान पाता है। उन्होंने कहा कि शिक्षा का उद्देश्य है। आन्तरिक पूर्णता का ब्राह्य प्रकाश इसी कारण वह यह मानते हैं।

मनुष्य का अर्थ स्पष्ट करते हुये वह कहते हैं ''मनुष्यत्व का तात्पर्य उन लौकिक एवं अलौकिक सद्गुणों को धारण करना है जिनसे मनुष्य में सद्गुण आ सकें।'' सदगुणों की श्रेणी में वह आत्म विश्वास, आत्म श्रद्धा, आत्म नियंत्रण, आत्म निर्भरता व आत्म–प्रेम निहित करते हैं। वह कहते हैं कि जब व्यक्ति आत्म चेतन हो उठता है। तब उसके अन्दर यह भावना आती है। ''उठो जागो तब तक न रूको जब तक परम लक्ष्य प्राप्ति न कर लो''।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य अधोलिखित है।

मानसिक विकास

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा को बालक का विकास मानसिक रूप से करना चाहिए। उनका कहना था कि बालक बहुत कुछ पहले से ही जानता है। शिक्षा के द्वारा बालक की मानसिक शक्तियों का विकास किया जाना चाहिए।

नैतिक शिक्षा

शिक्षा का उद्देश्य बालकों का नैतिक विकास करना होना चाहिए। किसी देश का उत्थान अच्छे नागरिकों से होता है।

आध्यात्मिक विकास

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य आध्यात्मिक विकास करना है।

चरित्र निर्माण

शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य बालकों का चरित्र निर्माण करना है। स्वामी जी के अनुसार चरित्रविहीन शिक्षा व्यर्थ है।

अन्तर्राष्ट्रीयतावाद एवं विश्वबंधुत्व

स्वमी विवेकानन्द जी अन्तर्राष्ट्रीयतावाद और विश्वबंधुत्व के बारे में शिकागों धर्म संसद के समाप्त होने के बाद कहा गया, ''जहाँ अन्य सब प्रतिनिधि अपने–अपने धर्म के ईश्वर की चर्चा करते रहे, वहाँ केवल विवेकानन्द ने सबके ईश्वर की बात की''।

इन्होंने एक बार कहा है–

''निः संदेह मुझे भारत से प्यार है, पर प्रत्येक दिन मेरी दृष्टि अधिक निर्बल होती जाती है। हमारे लिए भारत या इंग्लैण्ड या अमेरिका क्या हैं? हम तो ईश्वर के सेवक हैं, जिसे ब्रह्मा कहते हैं कि जड़ में पानी देना वाला क्या सारे वृक्ष को नहीं सींचता है।''

स्वामी जी शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में विश्व चेतना तथा विश्वबन्धुत्व के गुणों का विकास करना भी बताते थे।

व्यवसायिक क्षमता का विकास

यह सत्य है कि जब तक बालक को व्यवसायिक शिक्षा नहीं मिलती वह अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सकता इसलिये शिक्षा का उद्देश्य व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करके बालक को अपने पैरों पर खड़ा होने की क्षमता प्रदान करना है।

शिक्षा का पाठ्यक्रम

स्वामी जी जब पाठ्यक्रम की बात करते हैं तो वह मानते हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इस विस्तृत विश्व में वह एक निरीह मूक मानव के रूप में जन्म लेता है। तथा विभिन्न विषयों के ज्ञान के द्वारा ही वह अपने को परिष्कृत करता है। उनकी मान्यता थी कि पाठ्यक्रम निर्माण का आधार धर्म व मूल्यों को होना चाहिए चूंकि यह मनुष्य को पूर्ण मानव बनाने में पाठ्यक्रम निर्माण का आधार धर्म व मूल्यों का होना चाहिए। यह मनुष्य को पूर्ण मानव बनाने में सहयोग देते है। परन्तु पाठ्यक्रम में लौकिक विषय को भी सम्मिलित करना चाहिए इन आधार पर उन्होंने पाठ्यक्रम को दो श्रेणी में विभाजित किया।

(अ) **लौकिक पाठ्यक्रम**

(ब) **आध्यात्मिक पाठ्यक्रम**

(अ) लौकिक पाठ्यक्रम

1. भाषा–संस्कृत, मातृभाषा, प्रादेशिक भाषा एवं अंग्रेजी को सम्मिलित किया।
2. विज्ञान
3. मनोविज्ञान
4. गृहविज्ञान
5. तकनीकी शास्त्र
6. उद्योग कौशल
7. कला, संगीत अभिनय व चित्रण
8. कृषि व व्यवसायों की शिक्षा
9. इतिहास
10. भूगोल
11. गणित
12. राजनीति
13. अर्थशास्त्र
14. खेलकूद व व्यवसाय
15. राष्ट्र सेवा

(ब) आध्यात्मिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत उन्होंने ये विषय रखे हैं।

1. धर्म पुराण
2. पुराण
3. उपदेश श्रवण
4. कीर्तन
5. गीत व भजन
6. साधु संगत

पाठयक्रम को स्वामी जी ने दो भागो में विभक्त करने के उपरात्त उन्होंने कहा पाठ्यक्रंम का निर्माण बालक को केन्द्र मानकर व उसकी रूचि व क्षमता के अनरूप होना चाहिए। वे सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को बाल केंद्रित शिक्षा के रूप में देखते थे। विवेकानन्द गरीबों के धना अर्थभाव को ध्यान मे रखते हुए, वे निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की वकालत करते थे, जो उनकी दूरदृष्टि का सबल प्रमाण आज वर्तमान मे शिक्षा के अधिकार के रूप में भारत सरकार द्वारा सन् 2010 से अस्तित्व में आया।

शिक्षण विधियाँ

स्वामी विवेकानन्द द्वारा समर्थित विधि पूरी तरह आध्यात्मिक कही जा सकती है। उनकी शिक्षा विधि पूरी तरह धर्म तथा योग साधना पर आधारित है। वे जिस शिक्षण विधि का समर्थन करते हैं उनमें निम्नलिखित विशेषताऐं होनी चाहिए।

1. विधि ऐसी जो मन को एकाग्र करना सिखाये।
2. विधि ऐसी हो जिसमें छात्र शिक्षक के गुणों का अनुकरण करते हुये उन्हें अपने जीवन में अपनाये।
3. शिक्षक तर्क व्याख्यान तथा उपदेश आदि के द्वारा छात्रों को अपना विकास करने तथा ज्ञान प्राप्त करने के अवसर प्राप्त करें।
4. योग विधि छात्रों के लिये सर्वप्रमुख होती है। क्योंकि इससे चित अवांछनीय प्रवृत्तियों का निरोध होता है। तथा मन को एकाग्र करने में सहायता मिलती है।

शिक्षक व शिक्षार्थी

शिक्षक एवं शिक्षार्थी के सम्बन्ध में स्वामी जी का मत है कि शिक्षा योजना में शिक्षार्थी का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। वह छात्र का पथ प्रदर्शक व सहायक होता है। उन्होंने शिक्षक के अन्दर बहुत सारे गुणों की अपेक्षा की जो इस प्रकार हैं।

- शिक्षक को आध्यात्मिक दृष्टि से दिव्य व परिपक्व होना चाहिए।
- साथ ही धार्मिक ग्रन्थों के सार तत्वों से अवगत होना चाहिए।
- शिक्षक को व्यवहारिक भी होना चाहिए जिससे वह मानव निर्माण के दायित्व को निभा सके।

जब वह विद्यार्थी की परिकल्पना करते हैं तो उसमें भी बहुत अधिक गुणों की परिचर्चा करते हैं वह यह मानते हैं कि विद्यार्थी को धर्मपरायण, कर्मनिष्ठ तथा जिज्ञासु होना चाहिए। जिन महत्वपूर्ण गुणों को वह छात्र के व्यक्तित्व में समाहित करना चाहिए वह इस प्रकार है।

- विद्यार्थी को मन शरीर से बलवान होना चाहिए।
- उसमें सत्य को जानने की प्रबल इच्छा होनी चाहिए।
- उसके अन्दर उचित इच्छा शक्ति व चित को एकाग्र रखने की क्षमता हो।
- विद्यार्थी को विद्या प्रेमी, विवेकशील, विचारशील, स्वप्रयत्नशील, कर्तव्यशील, गुरू के लिये श्रद्धा रखना, सुखों व भोगों का त्याग करना आदि होना चाहिए।
- धर्म व धार्मिक क्रियाओं में आस्था रखना जब वह गुरू शिष्यों की चर्चा करते हैं तो कहते हैं गुरू–शिष्य के मध्य पुत्र पिता का सम्बन्ध तुल्य आत्मिक होना चाहिए इसी कारण उन्होंने गुरूकुल वास की प्रशंसा की है। क्योंकि इसमें गुरू व शिष्य के बीच सानिध्य रहता है उनके विचार से वास्तविक शिक्षक वही है, जो बालक के मानसिक स्तर के अनुरूप ही अपने को ढालकर शिक्षा दे सके तथा अपनी अन्तरात्मा के विचारों को शिष्य की अन्तरात्मा में प्रविष्ट कर सके। शिक्षकों को बालकों की सामर्थ्य के अनुसार ही शिक्षा देनी चाहिए। उस पर बहुत अधिक बोझ नहीं लादना चाहिए। वास्तव में देखा जाये तो स्वामी जी ने गुरू–शिष्य के आदर्श सम्बन्ध को पुर्नजीवित करने के लिये हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

विद्यालय

स्वामी विवेकानन्द ने विद्यालय की कल्पना भी बालक के व्यक्तित्व के शारीरिक, बौद्विक, भावात्मक एवं आध्यात्मिक विकास के रूप में की है। उन्होंने विद्यालय के सम्बन्ध में कोई अलग से कल्पना नहीं की है। वरन् गुरू गृहवास के सम्बन्ध में अपने विचार दिये हैं। वह मानते हैं कि गुरू गृह शुद्व वायु से पूरित, शान्ति, सुखद एवं सुरभ्य स्थल में तथा आध्यात्मिक विकास में सहायक वातावरण में होने चाहिए उन्होंने विद्यालय को मठ के साथ जोड़ा है।

अनुशासन

जब अनुशासन की बात आती है तो स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं कि अनुशासन का रूप आवश्यकता और परिस्थति के अनुरूप होना चाहिए। यह रूप मुक्तयात्मक भी हो सकता है और भावात्मक भी भारतीय आदर्शवादी विचारक होने के कारण वह आत्मानुशासन पर विशेष बल देते थे व चरित्र निर्माण को अनुशासन का एक महत्वपूर्ण स्थान मानते थे। स्वामी जी न तो पूर्णरूप से व्यक्तिवादी थे और न समाजवादी बल्कि वे संश्लेषणवादी थे। अतः उन्होंने व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों प्रकार के अनुशासन पर बल दिया है। वह मानते थे कि स्वतंत्रता विकास की प्रथम दशा है, परन्तु मनुष्य केवल न्यूनतम विरोध के अन्तर्गत ही काम कर सकता है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने शिक्षा के विभिन्न आयामों के सम्बन्ध में भी अपने विचार व्यक्त किये हैं। जिनमें से महत्वपूर्ण इस प्रकार हैं।

नारी शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द के विचार

वह कहते हैं कि जन साधारण में स्त्रियों की शिक्षा का प्रसार किये बिना उन्नति का कोई उपाय नहीं है। उनके समय में नारी की स्थिति बहुत दयनीय थी और उनकी अवमानना पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी थी। उनका सरल हृदय इस अन्यायपूर्ण व्यवहार का विरोध कर उठा। उन्होंने नारी का अपमान करने वाले ठेकेदारों पुरोहितों की कटु आलोचना करते हुये कहा कि वे देश के पतन का कारण हैं। नारी को उसके अधिकारों से वंचित रखना और जब तक स्त्री व पुरूष में इतना भेदभाव रखा जायेगा जब तक देश निश्चित रूप से उन्नति नहीं कर सकेगा। जब वेदान्तों में बराबर यह प्रतिपादन किया गया है कि जगत के प्रत्येक जीव में एक ही आत्मा निवास करती है। तब किस आधार पर स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखा जाता है। स्त्री व पुरूष क्षमताओं की दृष्टि से समान है। स्त्रियाँ भी जीव ब्रह्म के सम्बन्ध में जानकारी रख सकती है। शिक्षा द्वारा स्त्री को यह समझाया जाना चाहिए कि उनका आदर्श सींग सावित्री व दमयन्ती है और अस्तित्व ही नारी जाति का जीवन शक्ति है। उन्होंने स्त्रियों को इतिहास, भूगोल, विज्ञान, ग्रहकला, स्वास्थ्य रक्षा, शिशुपालन, पुराण आदि विषयों की शिक्षा देना आवश्यक बताया। उनका चरित्र इतना उच्च हो कि वे अपने आदर्श से विचलित होने की अपेक्षा मृत्यु को श्रेयस्कर समझें।

आकांक्षा यह भी कि अपने देश में ऐसी स्त्रियां हो जो विदेशों में जाकर प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं उच्च आदर्शों की व्याख्या कर सकें तथा वेदान्त, गीता, रामायण, महाभारत आदि के विचार वहाँ व्यक्त कर सके। वह यह भी मानते थे कि उस परिवार तथा देश की उन्नति की सम्भावना नहीं की जा सकती, जहाँ स्त्रियों का आदर न हो, जहाँ वे दुखी रहे, जहाँ वह शिक्षित न हो इस कारण उन्हें ऊपर उठाना है। इस पर स्वामी विवेकानन्द कहते है, ''स्त्रियों की अवस्था को सुधारे बिना जगत के कल्याण की कोई संभावना नहीं है। पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना सम्भव नहीं है।'' इस कथन में नारी की सामाजिक वास्तविकता और पुरूष के साथ नारी की विकासगत उड़ान की युगल अनिवार्यता का संदेश छिपा हुआ है। उसी प्रकार देश का सम्यक् उत्थान मात्र पुरूषों की शिक्षा से सम्भव नहीं है। स्त्रियों को पुरूषों के समान ही शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर सुलभ होना चाहिए ।

जन शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द के विचार

वह कहते हैं कि जन–साधारण को शिक्षित करो और ऊपर उठाओ केवल तभी यह देश यथार्थ में राष्ट्र के रूप में खड़ा हो सकेगा। वह कहते हैं कि सामान्य जनता के गिरे हुये स्तर को देखकर मुझे दुख होता है और यही भारत वर्ष के पिछडेपन का कारण है। उन्होंने देश की अधिकांश अशिक्षित, पददलित और विभुक्षित जनता की दशा को सुधारने का निश्चय किया क्योंकि वह जानते थे कि इन लोगों की अवहेलना करके देश को उन्नति के शिखर पर नहीं पहुँचाया जा सकता। उनका यह भी विचार था कि ''मानवता का आदर करो, गिरे हुये लोगों को आगे बढ़ने के अवसर दो, शिक्षा कोई एकाधिकार की वस्तु नहीं है। उसे सर्वप्रथम साधारण तक पहुँचाने की व्यवस्था करो।'' वह यह भी मानते थे कि अधिक से अधिक लोगों को शिक्षित किया जाना चाहिए क्योंकि राष्ट्र उसी अनुपात में प्रगति की ओर अग्रसर हो जाता है। उन्हें मानचित्र, चार्ट, कैमरे, भ्रमण आदि के माध्यम से शिक्षा दी जानी चाहिए उन्होंने कहा कि हमारे निम्नतम वर्गों के लिये एकमात्र सेवा शिक्षा के द्वारा उनके खोये हुये व्यक्तित्व को विकसित करना है।

धर्म शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द के विचार

वह कहते हैं कि भारत में किसी प्रकार के सुधार या उन्नति की आवश्यकता है तो सबसे पहले धर्म की उन्नति की आवश्यकता है। भारत को समाजवादी या राजनीतिक विचारों की प्लावित करने से पहले आध्यात्मिक विचारों द्वारा प्लावित करो। मेरे कहने का मतलब ये नहीं कि दूसरी किसी चीज की आवश्यकता ही नहीं, मेरे कहने का अर्थ यह भी नहीं कि राजनीतिक या सामाजिक उन्नति की जरूरत नहीं है। मेरा तात्पर्य यही है और मैं तुम्हें सदा यही याद दिलाना चाहता हूं कि ये सब गौण है। धर्म ही मुख्य विषय है। विश्व की महान विभूतियों के प्रति श्रद्धा तथा आदर की भावना जाग्रत करना धर्म के अन्तर्गत आता है।

वे महान आत्माएँ जिन्होंने सत्य की खोज के लिये आत्मोसर्ग कर दिया है। उनके आदर्शों का अनुकरण करना सिखाना चाहिए। सबसे महान धर्म है। अपनी आत्मा के प्रति सच्चा बनना। अन्त में वह कहते हैं कि धर्म का अर्थ है–हृदय के अन्तरस्थ प्रदेश में सत्य की उपलब्धि। शारीरिक विकास का उत्कर्ष हेतु उन्होंने ब्रह्मचर्य का अनुपालन आवश्यक बताया है वह कहते हैं कि ''धर्म व्यक्ति में पुरूषत्व लाता है।''

राष्ट्रीय शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द के विचार

स्वामी विवेकानन्द शिक्षा के द्वारा राष्ट्र व विश्व का निर्माण करना चाहते थे। वह चाहते थे कि शिक्षा का प्रारम्भ घर होना चाहिए व उसका प्रसार वृहत समाप्त होना चाहिए। जिससे वह छात्रों को संकुचित प्रेम दायरे को विश्वदायी प्रेम में परिवर्तित कर दे। प्रेम ही जीवन का एकमात्र गति निर्धारक है। स्वार्थपरता ही मृत्यु है। जीवन रहते हुये भी यह मौत है। मानव जीवन और उसकी अन्तिम परिपूर्णता की उनकी योजना में त्याग और सेवा केन्द्रीय भूमिका अदा करते हैं।

वह कहते हैं कि पुनर्निर्माण की दिशा में पहला कदम है, मानव निर्माण। वह कहते हैं कि यदि भारत को महान बनना है तो इसके लिये आवश्यकता है। संगठन करने की ओर बिखरी हुई इच्छा शक्ति को एकत्रित करने की। वह शिक्षा को राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप उनकी व्यक्तियों से यह अपेक्षा है कि यदि वह अपने राष्ट्र को महान बनाना चाहता है तो तीन बातें आवश्यक हैं। सदवृत्ति की शक्ति और अडिग श्रद्धा अविश्वास और ईर्ष्या से मुक्ति तथा सत् प्रवृत्ति एवं सत्कार्य में रत व्यक्तियों के प्रति सहयोग का भाव।

व्यवसायिक शिक्षा पर स्वामी विवेकानन्द के विचार

स्वामी विवेकानन्द जी का विचार था कि जनता को अगर आत्म निर्भर बनने की शिक्षा न दी जाये तो भारत के एक छोटे से गांव के लिये संसार की दौलत लगा देने से भी वह पर्याप्त नहीं होगी। वह यह भी मानते थे कि खाली पेट धर्म नहीं होता है। इसी कारण उनका विचार था कि शिक्षा को तकनीकी व वैज्ञानिक होना चाहिए। उसे व्यवसायों को इतना ज्ञान अवश्य देना चाहिए कि छात्र अपने उदर की पूर्ति कर सके। इसी कारण वह यह भी कहते हैं कि कार्यक्षेत्र से पलायन करना शान्ति का पथ नहीं है। इसी कारण इस जगत में हर मनुष्यों को कर्म करना ही पड़ेगा। इसके लिए उन्होंने शिक्षा के द्वारा मनुष्य को उत्पादन एवं उद्योग कार्य तथा अन्य व्यवसायों में प्रशिक्षित करने पर बल दिया ।

निष्कर्ष

इस प्रकार स्वामी विवेकान्द जी के जीवन दर्शन पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि केवल शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास ही नहीं होता, बल्कि व्यक्ति में मानवता, आध्यात्मिकता का भी विकास होता है। विवेकानन्द जी ने अपने समय की शिक्षा से संबधित विभिन्न समस्याओं पर गहन चिंतन किया और उनके समाधान के लिए जो सुझाव दिए वे वर्तमान की शैक्षिक समस्यओं को सुलझाने में सहायक प्रतीत होते हैं। इस तरह से अनेक शैक्षिक विचारों को प्रासंगिक कहा जा सकता है।

इस प्रकार डा. आर.एस.मानी के शब्दों में–

''उनके जीवन का लक्ष्य इस बात का प्रचार करना था कि लोगों में श्रद्धा तथ मानसिक वीर्य का विकास हो, वे आत्मा का ज्ञान प्राप्त करें तथा अपने जीवन को दूसरों की भलाई के लिए त्याग दें। यही थी उनकी इच्छा तथा आर्शीवाद।''

''मैं जन साधारण की अवेहलना करना महान राष्ट्रीय पाप समझता हूँ । यह हमारे पतन का मुख्य कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर उपयुक्त शिक्षा अच्छा भोजन तथा अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान की जायेगी तब तक हमारा राष्ट्रप्रगति नहीं कर सकता'' ।

वे भारतीय धर्म दर्शन की व्यवस्था आधुनिक परिप्रेक्ष्य में करने, वेदान्त को व्यवहारिक रूप देने एवं उसका प्रचार करने और समाज सेवा एवं समाज सुधार करने के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं परन्तु इन्होने शिक्षा की आवश्यक्ता पर बल दिया और नव भारत के निर्माण के लिए तत्कालीन शिक्षा में सुधार हेतु अनेक सुझाव दिये। प्रस्तुत आलेख में स्वामी विवेकानंद के शिक्षा सम्बन्धी विचारों की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिक्ता कहा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- अग्रवाल, जे.सी., (2009), *शिक्षा का मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक और सामाजिक सुधार,* प्रकाशक 115–ए विकास मार्ग शंकरपुर दिल्ली।

- अग्रवाल, जे.सी. भोला पी. (2010), *भारतीय दर्शन एक अध्ययन,* प्रकाशक शिप्रा पंकज सैन्टर मार्केट पडपड़गंज दिल्ली।
- एलैक्स शीलू मैरी, (2008), *शिक्षा दर्शन,* रजत प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 141
- पाठक एवं त्यागी (2004) *शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त,* प्रकाशक विनोद पुस्तक मन्दिर हॉस्पिटल रोड़ आगरा–3
- श्रीवास्तव, मदन मोहन, (2007), *शिक्षा के दार्शनिक परिप्रेक्ष्य,* प्रकाशक वंदना पब्लिकेशन्स द्वितीय तल जे.एम. डी. हाउस–4 बी असारी रोड़ दरियागंज नयी दिल्ली।
- पचौरी, गिरीश, (2010), *शिक्षा का दर्शन,* आर. लाल बुक डिपो निकट गवर्नमेण्ट कॉलिज मेरठ।
- सक्सैना, एन.आर. स्वरूप, (2009), *शिक्षा दर्शन एवं पाश्चात्य तथा भारतीय शिक्षाशास्त्री.* आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
- कुमार भवेश (2010), स्वामी विवेकानन्द के शौक्षिक चिंतन की प्रासंगिकता,. *भारतीय आधुनिक शिक्षा.* जनवरी 2010 बर्ष 30, अंक 3 पृ. 48
- गुप्ता, विनीता, (2013), स्वामी विवेकानन्द के राजनीतिक एवं सामाजिक चिन्तन की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सार्थकता. *भारतीय आधुनिक शिक्षा,* अप्रैल 2013, वर्ष 33 अंक 4 पृ. 35
- बाबू अनिल (2015), स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता. *भारतीय आधुनिक शिक्षा,* अप्रैल 2015, वर्ष 35 अंक 4 पृ. 89
- वर्मा कुमार, अरूण, (2013) स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा संबंधी विचार सार्थकता एवं प्रासंगिकता. *भारतीय आधुनिक शिक्षा,.* जुलाई 2013, वर्ष 34 अंक 1 पृ. 45

*** Corresponding Author:**

डा. पवन कुमार,

सह. प्राध्यापक शिक्षाशास्त्र, गुरू नानक कालेज ऑफ एजुकेशन, डल्लेवाल, होशियारपुर

pawankumar197115@gmail.com , 99144-14333, 94171-50563